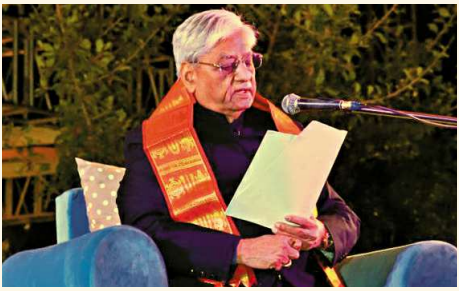

प्रिय साथियों,

जीवन के कालखण्ड भिन्न-भिन्न होते हैं, किन्तु जीवन समग्रता का ही दूसरा नाम है। बचपन-युवावस्था-वृद्धावस्था एक ही चित्र के विभिन्न पहलू हैं। ईश्वर कहो, प्रकृति कहो, एक ही चित्रकार है। उसे ही अन्तिम अवस्था अथवा सम्पूर्ण प्रारब्ध की जानकारी होती है। मैं जीवन के तीन आश्रमों को पार करके यह देख रहा हूं कि आज मैं जहां हूं, जिस मार्ग से चलकर यहां पहुंचा हूं, वह मार्ग तय था। वह मार्ग नहीं होता तो आज मैं भी यहां नहीं होता। हर व्यक्ति जो मेरे साथ इस मार्ग का सहयात्री बना, चाहे माता-पिता, दादा-दादी, अन्य मित्र -परिजन सबने मिलकर मुझे यहां पहुंचने में सहायता की। जिनको मैंने अपना विरोधी माना, उन्होंने मेरी सबसे बड़ी सहायता की। मुझे तेज गति से परिपक्व किया, मजबूत किया। मेरे अपने मूल्यों में दृढ़ता और निरन्तरता आई, उन्हीं की कृपा से। इसे मैं ईश्वर का अनुग्रह मानता हूं कि मुझे तैयार करने के लिए इतने लोगों को मेरे साथ जोड़ा। इन सबको नमन करता हूं। मैं इन सबकी साधना का ही फल हूं -जैसा भी हूं, आपके सामने हूं। मेरा अन्तिम पड़ाव आज लेखन बन गया। मैं नहीं जानता कि आगे भी कोई नया पड़ाव आने की प्रतीक्षा कर रहा है। किन्तु पिछले वर्षों में जो भी पड़ाव आया, वह आज भी मेरे सामने है। उसकी भूमिका मुझे स्पष्ट दिखाई दे रही है। मुझे जिस तरह का संघर्ष झेलना था, उसकी तैयारी प्रकृति ने समय से पूर्व करवा दी। अध्यात्म में मेरी नींव मेरे दादाजी डाल गए। मेरे गुरु ने शरीर के भीतर-स्वयं के साथ जीना सिखाया। उसका एक प्रभाव यह रहा कि

मैं आगे बढ़ता गया- पिछला भूलता चला गया। समय के साथ मेरा इतिहास भी मिटता चला गया। कल की चिन्ता नहीं रही। वर्तमान है बस! यह वर्तमान ही मेरे जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

श्रद्धेय पिताजी का आदेश था कि जिस दिन साठ वर्ष के हो जाओ, अन्य कर्मचारियों की तरह निवृत्त हो जाना। सही अर्थों में यहीं वानप्रस्थ आश्रम शुरू हुआ। वर्ष 2000 में मुझे गुरु का सान्निध्य मिला। वर्ष 2009 में निवृत्ति हुई। इस बीच में आगे के लिए तैयार किया गया। आज संन्यास आश्रम में प्रवेश है। निजी जीवन की परिभाषा को पीछे छोड़ने का दिन है। मेरी कोई निजी कामना शेष नहीं रहेगी। केवल प्रारब्ध भोगा जाएगा। उसको टाला नहीं जा सकता।

असंख्य योगियों के इस देश में एक ही योगेश्वर हुआ है- कृष्ण। राजा था, परिवार था, छलिया था, रणछोड़ था। गोपियों के वस्त्र भी चुराए और द्रौपदी का चीर भी बढ़ाया। शान्तिदूत भी बने और उन्हीं के मध्य युद्ध में भूमिका भी निभाई। असुरों का वध भी किया। उनका उद्घोष था-

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।। गीता(4.8)

यही संन्यास की मूल परिभाषा है। राष्ट्र में धर्म की स्थापना के लिए संघर्षरत रहना। अधर्म के विनाश के लिए तत्पर रहना, दृढ़ रहना। हर वृक्ष की, हर बीज की एक भूमिका होती है। उसका भी बालपन-यौवन-वृद्धावस्था होती है। संन्यास आश्रम में उसके भी फूल-फल लगते हैं, जिन्हें न तो बीज खाता है, न ही पेड़ खाता है। राष्ट्र भोगता है। बीज को धरती ने पेड़ बनाया, फल धरती को लौटाने हैं। बीज ही फल का इतिहास है। मैं आज भी कुलिशजी का बेटा हूं, स्वयं में कुछ नहीं। **पिता वै जायते पुत्रो!** मां ही पिता को पुत्र बनाती है। अतः देवी है। मेरी पत्नी ने भी मुझे ही सन्तान रूप में पैदा किया है। इस सृष्टि क्रम में पिता (बीज) नहीं बदलता। मां (धरती) ही बदलती जाती है। मां ही विरासत की संचालिका है। वही जोड़ती है, वही मोड़ती है, वही तोड़ती है। वही शक्ति का केन्द्र है। नए-नए शरीर बनते जाते हैं। यही तो मूल में विरासत का विसर्जन है, अगली पीढ़ी को। यही संन्यास है। कर्म से अकर्म (ब्रह्म) की ओर चल पड़ना।

आज मेरे दोनों पुत्र चि. नीहार और चि. सिद्धार्थ ही पत्रिका की इस कागज की नाव के खेवनहार हैं। अब आगे दोनों को आपको सौंपता हूं। मैं जैसा हूं, मुझे वैसा ही जीना है। किसी अन्य जैसा मैं बन भी नहीं पाऊंगा। फिर नकल कैसी। भारतीय हूं, तो विदेश की नकल करके आत्मा से दूर ही

जाऊंगा। मेरी स्वतंत्रता तो भारतीय रहने में ही है। यही अपनी लकीर को बड़ा करना है। आपके प्रयास से कोई छोटा नहीं हो जाएगा। प्रयास भी न करें। प्रतिद्वन्द्वी से अच्छा कोई शुभचिन्तक नहीं होता। वही आपके विकास के लिए पैदा होकर आता है। यही उसकी दिव्यता है।

नीयत बस सदा शुद्ध रहे। पानी और फव्वारा दो नहीं है, यह विवेक बना रहना चाहिए। बीज, पत्ता, फूल, फल एक ही शरीर के अंग हैं, लेकिन न तो स्वयं के लिए जीते हैं, न ही एक-दूसरे के लिए। यह संहित भाव ही वसुधैव कुटुम्बकम् है। यही तो संन्यास की- मेरे भविष्य की अवधारणा है। आप सब देवताओं ने मिलकर मेरे व्यक्तित्व का निर्माण किया है। मन मन्दिर के देवता भी पाठक रूप में आप ही हैं। मेरा स्वयं का कोई लक्ष्य नहीं रहा। जैसा अवसर आता गया, बदलता गया। अतः मेरा कोई परिचय भी नहीं है। मैं पत्रिका हूं- बस, पत्रकार हूं- बस, लेखक हूं- बस, सिपाही हूं- बस! आज के बाद कुछ भी नहीं। कामनामुक्त- बस!

मेरी मां वो थी, जिसने पिताजी को स्वर्ग जाते हुए देखा! मेरे गुरु वो थे, जो रोज घर बैठे यह देखते थे कि मैं समय पर स्वाध्याय में बैठा या नहीं। फोन करते थे। मेरे संरक्षक ऐसे थे जो दूर-यूरोप में बैठकर भी देख लेते हैं कि मैं कहां हूं, कहां जा रहा हूं, दुर्घटना तो नहीं होने वाली। फोन करते हैं- ठीक तो हैं न सब? मेरे आध्यात्मिक सहयात्री- आचार्य महाप्रज्ञ- ऐसे थे, हर बार 3-4 दिन पूर्व जान लेते थे कि मैं आऊंगा। मेरे श्रद्धेय पिताजी ने तो मुझे छैणी-हथोड़ी से घड़ा था। एयरफोर्स से आया था। नई मूर्ति घड़नी थी। घड़ गए। देना सिखा गए। अपना कुछ भी नहीं। खाली आए थे। खाली जाना है। हम भी कर्मचारी हैं, मालिक तो बस ईश्वर है। बांटों और खाओ। भीतर-बाहर का संतुलन स्व. देवीदत्त गुरुजी ने मंत्र दीक्षा में ही समझा दिया था। अभ्यास में कुछ समय लग गया।

जीवन का अन्तिम अध्याय कृष्ण ने समझा दिया। **चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।** (गीता 4.13)। इसने सम्पूर्ण चिन्तन को व्यवस्थित कर दिया। तीनों गुण (सत्व-रज-तम), चार वर्ण (ब्रह्म-क्षत्र्-विट् वीर्य) सब आत्मा के अंग है। मानव निर्मित नहीं है। ये ही जीवन को ऊपर उठाने का मार्ग है। वरना पशु की तरह, आहार-निद्रा-भय-मैथुन में ही सौ साल पूरे हो जाते हैं।

मीडिया पर्दे के पीछे राष्ट्र-निर्माण का कार्य भी करता है। संस्कृति का पोषण, सामाजिक शिक्षण एवं लोकतंत्र के तीनों पायों की भूमिका का साक्षी है। देश के कर्णधारों के दृष्टिकोण को पुष्ट करता है, बिना किसी अपेक्षा भाव के। एक बार

व्यक्तिगत चर्चा में माननीय प्रधानमंत्री जी ने कहा था कि तुम नहीं जानते, तुम मुझे कितना मैटर भेजते हो। समय के अभाव के कारण कभी-कभी फ्लाइट में पढ़ता हूं। यह भी सकारात्मक लेखन की एक भूमिका है।

सत्ता का भी एक मद होता है, जिसके अहंकार में सरकारें जनता का अहित करना शुरू कर देती हैं। जनता की सरकार जनता के लिए भस्मासुर बन जाती है। मीडिया जन-सहयोग के साथ सरकार के विरुद्ध मोर्चा खोलता है। सरकार घुटनों पर आ जाती है। पत्रिका ने 'काला कानून', मास्टर-प्लान की अनदेखी के विरुद्ध मोर्चा खोला- जनता जीती। छत्तीसगढ़ में हमारे पत्रकारों पर सदन में प्रवेश पर रोक लगी, न्यायालय में संघर्ष को ले गए। मीडिया जब घुटने टेक दे तो लोकतंत्र तानाशाही बन सकता है।

श्रद्धेय पिताजी सदा एक बात दोहराते रहे- पाठक हमारा भगवान है। आज भी हमारा यही संकल्प है। अखबार हमारी पूजा की थाली है। पाठक के सुखद जीवन की मंगलकामना के फूल भरते हैं इसमें। ब्रह्म मुहूर्त में हॉकर उसे देवता के घर पहुंचाता है। उसे प्रसन्न रखना ही हमारा अन्तिम उद्देश्य है। इसी भाव-भूमि के लिए माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी, सात सितम्बर, 2020 को इस तथ्य की पुष्टि कर गए, जब उन्होंने दो ग्रन्थों- अक्षर यात्रा और संवाद उपनिषद् का ऑनलाइन विमोचन किया था। 'पत्रिका अखबार हर दिन लोगों के घर के दरवाजे खोलता है और पढ़ने के बाद मन के दरवाजे खोलता है।' नमन करता हूं उनको। बताइए! अब कौनसा सम्मान इससे बड़ा होगा। आप सबकी उपस्थिति ने इस सम्मान को रत्नों से जड़ दिया। इससे बड़ी दौलत और क्या कमाई जा सकती है! आप सब मेरे जीवन का धन हैं, सम्मान हैं, गौरव हैं। आपका हाथ सदा हमारे साथ रहे। यही प्रार्थना भी है। आप सबको भी प्रणाम करता हूं।

आप सब वृहद्जनों-शुभचिन्तकों-सहयात्रियों का हृदय से स्वागत-अभिनन्दन-आभार! मैं जो भी आज हूं उसमें आप में से हर एक की भूमिका-आशीर्वाद मेरे खून में प्रवाहित है। दर्पण में आप सभी का अंश मुझे अपने चेहरे में दिखाई देता है। भविष्य में भी मुझ पर इसी तरह प्रसन्न होकर आशीष देते रहें, यही प्रार्थना है। आपका कल भी स्वर्णिम हो!!

गुलाब कोठारी

(जयपुर में 13 जनवरी 2024 को अमृत यात्रा सोपान महोत्सव में प्रस्तुत संबोधन)